miHkkDrk f'k{kk iLrdekyk&1

भारत में उपभोक्ता संरक्षणः कुछ महत्वपूर्ण पहलू

एस.एस. सिंह
सपना चड्ढ़ा

Hkkjrh; ykd i'kklu lLFkku] ubZ fnYyh
,oa
miHkkDrk ekeys foHkkx] Hkkjr ljdkj

भारत में उपभोक्ता संरक्षणः
कुछ महत्वपूर्ण पहलू

,l-,l- flg
liuk pM<k

Hkkjrh; ykd i'kklu lLFkku
ubl fnYyh

miHkksDrk f'k{kk eksukxzkQ lhjht

laiknd
एस.एस. सिंह
राकेश गुप्ता
सपना चड्ढ़ा
© भारतीय लोक प्रशासन संस्थान, नई दिल्ली
2005

मूल्य 20/– रुपये

उपभोक्ता संरक्षण और उपभोक्ता कल्याण में अनुसंधान संस्थानों/विश्वविद्यालयों/कॉलेजों आदि के शामिल करने को बाढ़ावा देने वाले परामर्शी कार्य के तत्वावधान में प्रकाशित।

प्रायोजक : उपभोक्ता मामले विभाग, उपभोक्ता मामले, खाद्य एवं सार्वजनिक वितरण मंत्रालय, भारत सरकार।

भारतीय लोक प्रशासन संस्थान, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित और न्यू यूनाइटेड प्रोसैस, ए–26, नारायणा औद्योगिक क्षेत्र, फेज–II, नई दिल्ली, फोन : 25709125 में मुद्रित।

भारत में उपभोक्ता संरक्षण : कुछ महत्वपूर्ण पहलू

विश्व अर्थव्यवस्था और व्यापार जगत की अंतराष्ट्रीय छवि के बीच बढ़ती परस्पर निर्भरता ने दुनिया भर में उपभोक्ता अधिकारों के संरक्षण और प्रोत्साहन को बल दिया है। दुनिया भर में ग्राहक और उपभोक्ता अपने पैसे की कीमत के रूप में बेहतर सामान और सेवाओं की मांग कर रहे हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है कि तकनीक के आधुनिक विकास ने वस्तुओं और सेवाओं की गुणवत्ता, उपलब्धता और सुरक्षा पर वृहद प्रभाव डाला है। लेकिन यह भी ज़मीनी सत्य है कि एक उपभोक्ता आज भी बेईमानी और शोषणकारी पद्धतियों का का शिकार है। उपभोक्ताओं का यह शोषण विभिन्न रूपों में सामने आता है, जैसे- खान पान की वस्तुओं में मिलावट, नकली दवाईया। अनिश्चित और अस्पष्ट किराया-खरीद योजनाएं, बेलगाम कीमतें, गुणवत्ता में कमी, खराब सेवाएं, छल कपट युक्त प्रचार, खतरनाक उत्पाद, कालाबाज़ारी आदि आदि। इसके साथ ही सूचना तकनीक में हुए क्रांतिकारी परिवर्तनों ने उपभोक्ताओं के समक्ष साईबर अपराध और प्लास्टिक मनी जैसी नई चुनौतियां खड़ी कर दीं हैं जो उस पर व्यापक प्रभाव डाल रहीं हैं। "उपभोक्ता सबसे ऊपर है" अथवा "उपभोक्ता ही भगवान है" जैसे दावे आज के युग में, और विशेषतः विकासशील समाज में, एक मिथक बनकर रह गए हैं। इसीलिए आज यह ज़रूरत महसूस की जा रही है कि उपभोक्ता के अधिकारों का संरक्षण, एक सामाजिक आर्थिक योजना के तहत हो, जिस पर, सरकार और उद्योग जगत, दोनों को ही ज़ोर देना होगा, क्योंकि उपभोक्ता के हितों की रक्षा दोनों के हित में है। हालांकि इस मामले में सरकार की प्रमुख ज़िम्मेदारी बनती है कि वह उचित नीति निर्धारण कर तथा कानूनी और प्रशासनिक व्यवस्था बनाकर उपभोक्ताओं के हितों और अधिकारों की रक्षा करे।

उपभोक्तावाद : विचारधारा

पुराने दिनों में "कैविएट एम्पटर" यानि "जागरूक खरीददार" का सिद्धांत क्रेता-विक्रेता के संबन्धों को नियंत्रित करता था। खुली बाज़ार व्यवस्था में क्रेता-विक्रेता आमने सामने आ गए। विक्रेता अपने सामान को सामने लाता है और क्रेता उसका संपूर्ण परीक्षण कर उसे नापतोल कर, खरीदता है। यह माना जाता है कि क्रेता अपने संपूर्ण विवेक और सावधानी का इस्तेमाल करते हुए खरीद फरोख्त करेगा।

इस सिद्धान्त ने विक्रेता को अपने सामान की गुणवत्ता का खुलासा करने की बाध्यता से मुक्त कर दिया है। पहले क्रेता-विक्रेता के बीच व्यक्तिगत संबन्ध भी उनके व्यापारिक संबंधों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे लेकिन व्यापार के विकास और भूमंडलीकरण के आने से ही यह चलन भी विलुप्त हो गया है। अब खरीददार के लिए किसी वस्तु को खरीदने से पहले ही उसकी जांच कर लेना असंभव है। यहां तक कि खरीद फरोख्त की प्रक्रिया का एक बड़ा हिस्सा सिर्फ पत्र व्यवहार से ही तय होता है। जहां तक किसी वस्तु अथवा उत्पाद की गुणवत्ता का सवाल है उसकी जटिल बनावट को देखते हुए सिर्फ निर्माता-विक्रेता ही उसकी गारंटी दे सकता है। निर्माण-उत्पाद की गतिविधियां लगातार संगठित हो रहीं हैं जिससे निर्माता और विक्रेता भी अधिक संगठित और शक्तिशाली होते जा रहे हैं। जबकि एक खरीददार उपभोक्ता अब भी असंगठित और कमज़ोर है। क्रांतिकारी दौर से गुजर रही सूचना तकनीक और ई-कामर्स में हो रहे नित्य नए आविष्कारों के बीच उपभोक्ता और भी वंचित बनता चला जा रहा है। इनके चलते उपभोक्ता को गुमराह कर उसे प्रतिदिन छल-कपट और धोखाधड़ी का शिकार बनाया जा रहा है।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने काफी अहम बताते हुए इसे "लाचार उपभोक्ता" की संज्ञा दी थी। उनके मुताबिक उपभोक्ता आंदोलन में सबसे ज्यादा लाभ उसे ही मिलना चाहिए। उनका कहना था, "उपभोक्ता हमारे यहां आने वाला सबसे महत्वपूर्ण आगुन्तक होता है। वह हम पर निर्भर नहीं है बल्कि हम उस पर निर्भर हैं। वह हमारे

काम में बाधक नहीं है बल्कि हमारे काम का उद्देश्य है। हम किसी उपभोक्ता को अपनी सेवा अथवा वस्तु लेने का मौका देकर उस पर कोई उपकार नहीं कर रहे होते हैं वरन अपनी सेवा का मौका देकर वह हमें उपकृत करता है। राष्ट्रपिता के इन महान विचारों के बावजूद उपभोक्तावाद हमारे देश में अपने शैशव में ही है। इसकी वजह हैं – विक्रेता बाज़ार और अधिकतर सेवाओं पर सरकार का एकाधिकार। अधिकारों के प्रति उदासीनता और शिक्षा की कमी के कारण जनता में उपभोक्ता अधिकारों को लेकर जागरूकता काफी कम है। उन्हें कोई यह जानकारी भी नहीं देता कि सामान की गुणवत्ता और कीमत जानना, खतरनाक उत्पादों के प्रति सुरक्षा, प्रतियोगी मूल्यों पर विभिन्न प्रकार के उत्पादों तक पहुंच होना, उपभोक्ता शिक्षा आदि उनके उपभोक्ता अधिकारों में आता है। यहां के उपभोक्तावाद में अभी शिक्षा और सूचना के संसाधन, गुणवत्ता परीक्षण सुविधाएं, योग्य नेतृत्व, मूल्य नियंत्रण प्रक्रिया, और पर्याप्त न्यायिक कार्य-प्रणाली जैसी कई खामियां हैं जो इसे प्रभावित कर रहीं हैं। वहीं सामान और सेवाएं उपलब्ध कराने वाला वर्ग भी उपभोक्ता के अधिकारों की ओर ध्यान देने के मामले में अनिच्छुक ही दिखते हैं।

हालांकि उपभोक्ता अधिकारों के संरक्षण की धारणा भी उपभोक्ता के शोषण जितनी ही पुरानी है लेकिन मौजूदा परिस्थितियों में इसका महत्व और सार्थकता काफी बढ़ गई है। यह एक सामाजिक आंदोलन बन गया है। उपभोक्तावाद को उपभोक्ता के हितों के संरक्षण के रूप में परिभाषित किया जाने लगा है। मैकमिलन शब्दकोश(१९८५) के मुताबिक। उपभोक्तावाद, उपभोक्ताओं को ऐसे समूहों और संगठनों से संरक्षण प्रदान करता है, जिनके साथ वह आदान प्रदान करते हैं। यह सरकार, व्यापार जगत, स्वतंत्र संगठन और अपने अधिकारों के हित में काम कर रहे उपभोक्ताओं को एक चक्र में सम्मिलित करता है"। चैंबर्स शब्दकोश(१९९३) में उपभोक्तावाद को, विभिन्न दोषग्रस्त और नुकसानदेह वस्तुओं और सेवाओं के, उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा करने के रूप में परिभाषित किया गया है। "उपभोक्तावाद, उपभोक्ताओं के हित में वस्तुओं-सेवाओं और निर्माता-विक्रेता व

विज्ञापनदाताओं के तौर तरीकों तथा मानकों को नियंत्रित करने के लक्ष्य के लिए नीतियों की प्रक्रिया है। यह नियंत्रण वैधानिक, संस्थागत, किसी औद्योगिक संस्थान द्वारा स्वेच्छा से स्वीकृत आचरण के रूप में अथवा उपभोक्ता संगठनों के दवाब का नतीज़ा भी हो सकता है"

इस प्रकार कहा जा सकता है कि उपभोक्तावाद से तात्पर्य सरकार, व्यापार जगत और अन्य स्वतंत्र संगठनों की उपभोक्ता हितों को संरक्षण देने वाली गतिविधियों से है। उपभोक्तावाद एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा उपभोक्ता, संगठित अथवा असंगठित प्रयासों और गतिविधियों से अपनी असंतुष्टि तथा निराशा का समाधान, उपाय तथा क्षतिपूर्ति की मांग करते हैं। कहा जा सकता है यह वस्तुओं के निर्माताओं और विभिन्न प्रकार की सेवाएं उपलब्ध कराने वाली संस्थाओं से उपभोक्ता के हितों की रक्षा के लिए एक सामाजिक आंदोलन है। सर्व व्यापक अर्थों में देखें तो आज उपभोक्तावाद लोगों द्वारा अपने पैसे की सही कीमत वसूलने की कोशिश है। आज उपभोक्ता ही व्यापार का प्रमुख केंद्र हो गया है। उसकी संतुष्टि से न सिर्फ व्यापार को बल्कि सरकार और समाज को भी लाभ मिलेगा। इसलिए उपभोक्तावाद को व्यापार जगत के विरुद्ध उपभोक्ताओं के संघर्ष के रूप में नहीं लिया जाना चाहिए। यह उपभोक्ताओं, उद्योग जगत, सरकार और समाज की ओर से संयुक्त रूप से चेतना का ऐसा प्रयास है जिससे उपभोक्ता संतुष्ट होंगे और समाज का कल्याण होगा। इतना ही नहीं इससे सबको फायदा होगा और अंततः यह समाज को रहने के लिए एक बेहतर जगह बनाएगा।

उपभोक्तावाद के कई घटक हैं। सबसे पहले आता है उपभोक्ता द्वारा स्व-संरक्षण। एक उपभोक्ता को अपने अधिकारों का ज्ञान रखना चाहिए, किसी प्रकार के शोषण के विरुद्ध आवाज़ उठानी चाहिए और अपनी शिकायत का समाधान तलाश करना चाहिए। उपभोक्ताओं की चेतना ही उपभोक्तावाद का प्रभाव निर्धारित करती है। अपने अधिकारों को जानना और उनकी रक्षा करना एक उपभोक्ता का

कर्त्वय भी है। उपभोक्ता आंदोलन के दूसरे महत्वपूर्ण घटक हैं स्वयंसेवी उपभोक्ता संगठन जो उपभोक्ताओं को संगठित करने और उनके हितों की रक्षा में जुटे हुए हैं। उपभोक्तावाद की सफलता उद्योग जगत द्वारा यह समझ लेने पर निर्भर करती है कि स्वैच्छिक आत्म नियंत्रण का कोई विकल्प नहीं है। किसी भी औद्योगिक संस्थान द्वारा उपभोक्ता हितों के प्रति थोड़ी सी भी सतर्कता न सिर्फ उपभोक्ताओं बल्कि खुद उसे भी लाभ पहुंचाएगी। भारत में कई संस्थाओं ने स्वयं आगे आकर अपनी गतिविधियों पर नियंत्रण के लिए साझा आचार संहिता बनाई है। विधायिका द्वारा व्यापारिक गतिविधियों पर नियंत्रण, उपभोक्ता संरक्षण का एक महत्वपूर्ण माध्यम है। कुछ विकसित देशों में उपभोक्तावाद, निर्माताओं और सेवादाताओं पर कानूनी, नैतिक, और आर्थिक दवाब बनाकर उपभोक्ता की सहायता और सुरक्षा करने वाली ज़ोरदार ताकत के रूप में विकसित हो चुका है।

उपभोक्ता संरक्षण : अंतराष्ट्रीय परिदृश्य

कहना ग़लत नहीं होगा कि उपभोक्तावाद की परिकल्पना जाने माने अमेरिकी कानूनविद् और अधिवक्ता राल्फ नैडर की देन है। लेकिन कानून बनाकर उपभोक्ता अधिकारों के संरक्षण का इतिहास १८२४ से शुरू होता है। प्रत्येक वर्ष १५ मार्च को विश्व उपभोक्ता अधिकार दिवस मनाया जाता है। १९६२ में इसी दिन तत्कालीन राष्ट्रपति जान एफ कैनेडी ने संसद की बैठक बुलाकर उपभोक्ता अधिकार बिलों को मंजूरी दिलाई थी। ये बिल थे –१।चुनने का अधिकार २।सूचना का अधिकार ३।सुरक्षा का अधिकार और ४।सुनवाई का अधिकार। बाद में राष्ट्रपति गेराल्ड आर फोर्ड ने इसमें एक और अधिकार, उपभोक्ता शिक्षा का अधिकार भी जोड़ा था। इसी क्रम में बाद में स्वस्थ पर्यावरण का अधिकार और मूलभूत आवश्यकताओं (रोटी कपड़ा और मकान) के अधिकार भी जोड़े गए। भारत में भी हमने पिछले कुछ वर्षों से २४ दिसम्बर को राष्ट्रीय उपभोक्ता अधिकार दिवस मनाना शुरू किया है।

उपभोक्ता नीतियों के विकास के इतिहास में ९ अप्रैल १९८५ का दिन

काफी महत्वपूर्ण है क्योंकि इसी दिन संयुक्त राष्ट्र महासभा ने उपभोक्ता संरक्षण के लिए दिशा निर्देशों को मंजूरी दी थी तथा सदस्य देशों को कानून बनाकर या नीतियों में बदलाव के ज़रिए इन्हें लागू करने के लिए राज़ी करने की ज़िम्मेदारी संयुक्त राष्ट्र महासचिव को दी गई थी। ये दिशा निर्देश एक व्यापक नीति का रूपरेखा थे जो यह स्पष्ट करती थी कि सरकारों को उपभोक्ता संरक्षण को बढ़ावा देने के लिए क्या कदम उठाने चाहिएं। ये दिशा निर्देश निम्न सात प्रमुख क्षेत्रों में उपभोक्ता संरक्षण के कदम उठाए जाने पर बल देते हैं –

१. शारीरिक सुरक्षा
२. उपभोक्ता के आर्थिक हितों का संरक्षण और प्रोत्साहन
३. उपभोक्ता वस्तुओं और सेवाओं की गुणवत्ता और सुरक्षा के लिए मानक
४. उपभोक्ता वस्तुओं और सेवाओं के वितरण की सुविधाएं
५. उपभोक्ताओं की शिकायतों के निराकरण के लिए व्यवस्था
६. भोजन, पानी और दवाओं के संबन्ध में व्यवस्था
७. उपभोक्ता शिक्षा और सूचना कार्यक्रम

हालांकि ये दिशा निर्देश कोई कानूनी बाध्यता नहीं थे लेकिन इन्होंने उपभोक्ता हितों की सुरक्षा के लिए अंतराष्ट्रीय स्तर पर मान्य बुनियादी लक्ष्य तय कर दिए थे, जो खासतौर पर विकासशील और नव स्वतंत्र देशों में उपभोक्ता हित के कानून व नीतियां बनाने में सहायक साबित हुए। इन दिशा निर्देशों को यह स्वीकार करते हुए मान्यता दी गई कि उपभोक्ता को अक्सर आर्थिक मुद्दों, शिक्षा के स्तर और खरीद फरोख्त में असंतुलन का सामना करना पड़ रहा है। इसके पीछे उपभोक्ताओं को बेहतर वस्तुओं तक पहुंच का अधिकार देने और समान तथा सतत सामाजिक – आर्थिक विकास को बढ़ावा देने का महत्व भी विचार में रखा जा रहा था। आज की भूमंडलीकृत और खुली अर्थ व्यवस्था के दौर में संयुक्त राष्ट्र के यह दिशा निर्देश विभिन्न देशों को उपभोक्ता अधिकारों की सुरक्षा संबन्धी प्राथमिकताएं तय करने में भी सहायक सिद्ध हो सकते हैं।

संयुक्त राष्ट्र के ये दिशा निर्देश कोई अटल दस्तावेज़ नहीं थे, बल्कि बदलती सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक परिस्थितियों में इनमें संशोधन की पर्याप्त गुंजाईश थी। १९९९ में पुनर्विचार करते हुए इनमें "संभलकर उपभोग" को भी जोड़ा गया। यहां महात्मा गांधी के एक कथन का ज़िक्र करना उचित होगा, "धनवान लोगों को अधिक सादगी भरा जीवन जीना चाहिए ताकि गरीब लोग सादा जीवन जी सकें"। "संभलकर उपभोग" के पक्ष में इससे बेहतर तर्क और नहीं दिया जा सकता। यहां यह उल्लेख करना भी ज़रूरी है कि अंतराष्ट्रीय स्तर पर आपसी सहयोग में हुई वृद्धि भी भूमंडलीकरण का ही अंग है। उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा के लिए ओईसीडी देशों ने संघीय व्यापार के लिए जो नियम कायदे निर्धारित किए अब वही नियम ग़ैर ओईसीडी देशों के साथ भी उनके आचार में लागू हो सकते हैं। ओईसीडी देशों के नए निवेश सम्बन्धी दिशा निर्देशों में बहुराष्ट्रीय संघों द्वारा उपभोक्ताओं के साथ व्यवहार के बारे में सिद्धांतों का उल्लेख है। इन दिशा निर्देशों में बेहतर व्यापार, विपणन और विज्ञापन के साथ साथ सेवाओं और वस्तुओं की गुणवत्ता तथा सुरक्षा पर तो विचार दिए ही गए हैं वहीं इनमें खुद को उपभोक्ता मुहिम में शामिल करने और उसकी निगरानी में रखे जाने की बात भी कही गई है। इस पर नियंत्रण की भी यहां दोहरी व्यवस्था की गई है। इसके तहत गैर ओईसीडी देशों के संगठन, बहुराष्ट्रीय संघों के मूल देशों के साथ मिलकर काम करेंगे ताकि उन्हें इन दिशा निर्देशों के अनुसार काम न करने पर जवाबदेह ठहराया जा सके।

इससे पहले कि हम १९८६ के उपभोक्ता संरक्षण कानून के संदर्भ में बात करें हमें उपभोक्ता संरक्षण कानून के लिए ज़िम्मेदार तथ्यों पर कुछ गौर कर लेना बेहतर होगा। इनमें से कुछ महत्वपूर्ण तथ्य हैं –

– आधुनिक तकनीक की देन विभिन्न वस्तुओं और सेवाओं में लगातार आ रही विविधता

– उत्पाद और वितरण व्यवस्था में बढ़ती जटिलताएं और उसका लगातार विकसित होता दायरा

– वितरण और विक्रय के लिए विज्ञापन आदि के काम बड़े पैमाने पर आडंबरों का बढ़ना
– बड़े उपभोक्ता समूहों को लक्ष्य रखकर बनाई जाने वाली विपणन नीतियों में क्रेता और विक्रेता के बीच व्यक्तिगत संपर्क न रहना
और
– उपभोक्ताओं की बढ़ती गतिशीलता।

उपभोक्ता संरक्षण कानून १९८६: कुछ महत्वपूर्ण पहलू

इस कानून के बारे में चर्चा करने से पहले ही यह समझ लेना ज़रूरी है कि उपभोक्ता संरक्षण आंदोलन में रुचि रखने वाले व्यक्ति के लिए महज़ उपभोक्ता संरक्षण कानून १९८६ को समझ लेना ही काफी नहीं होगा बल्कि इसके लिए विभिन्न अन्य कानूनों की अच्छी समझ होनी भी ज़रूरी है। इसके लिए खासतौर पर ठेका– अनुबन्ध, नुकसान भरपाई, रेलवे, टेलीग्राफ, टेलीफोन, डाक विभाग, हवाई यात्रा, बीमा, बिजली, पानी, आवास, चिकित्सा, बैंकिंग, वित्त, अभियांत्रिकी, मोटर वाहन, होटल उद्योग, मनोरंजन, सहकारी संस्थाएं, पर्यटन व्यवसाय, बिक्री–कर, केंद्रीय कर, परिसीमन, यातायत इत्यादि से संबन्धित कानूनों का ज्ञान होना आवश्यक है। साथ ही अवैध कारोबार और प्रतिबन्धित व्यापार मामलों की अच्छी समझ होना भी आवश्यक है। उपभोक्ता मामलों में अदालत के सामने निपटारे के लिए आ सकने वाले विषयों की कोई सीमा नहीं है।

भारत में विभिन्न क्षेत्रों में उपभोक्ताओं का शोषण रोकने के लिए कई कानून बनाए गए हैं, मसलन – भारतीय दंड संहिता १८६०, भारतीय ठेकेदारी अधिनियम १८७२, दवा नियंत्रण अधिनियम १९५०, औद्योगिक (विकास एवं नियंत्रण) अधिनियम १९५१, भारतीय मानक संस्थान (प्रमाणन) अधिनियम १९५२, जड़ी बूटी एवं जादू–टोना समाधान (आपत्तिजनक प्रचार) अधिनियम १९५४, खान– पान मिलावट अधिनियम १९५४, आवश्यक वस्तु अधिनियम १९५५, उधार

खरीद अधिनियम १९७२। सिगरेट (उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण नियंत्रण) अधिनियम १९७५, कालाबाज़ारी निरोधी एवं आवश्यक वस्तु आपूर्ति अधिनियम १९८०, आवश्यक वस्तु (विशेष प्रावधान) अधिनियम १९८१, बहु राज्यीय सहकारी संस्था अधिनियम १९८४, मापन एवं तोलन मानक (प्रवर्तन) अधिनियम १९८५, इत्यादि। उपभोक्ता अधिकारों के संरक्षण के उद्देश्य से स्वतंत्रता प्राप्ति से पहले बने कुछ महत्वपूर्ण कानून थे - वस्तु बिक्री अधिनियम १९३०, कृषि उत्पाद(वर्गीकरण एव विपणन) अधिनियम १८३७ तथा दवा एवं प्रसाधन अधिनियम १९४०।

इनमें से एकाधिकार एवं प्रतिबन्धित व्यापार पद्धतियां कानून (जो अब वापस ले लिया गया है) को छोड़कर बाकी सभी कानून दंडात्मक तथा रोकथाम के प्रावधान वाले हैं। इनमें से कोई भी कानून किसी सामान के निर्माता या आपूर्ति करने वाले संस्थान की लापरवाही अथवा ग़लती की शिकायत करने पर शिकायतकर्ता उपभोक्ता को राहत नहीं देता है। एकाधिकार एवं प्रतिबन्धित व्यापार पद्धतियां कानून ने उपभोक्ता को शिकायत होने की स्थित में उसे एक मंच दिया। हालांकि इन तमाम कानूनों के बावजूद उपभोक्ता लाचार ही रहा और उसके पास अपनी शिकायत के त्वरित समाधान के लिए कोई व्यवस्था अथवा संस्था नहीं थी। इतना ही नहीं उपभोक्ता मामलों में प्रभावशाली आंदोलन की कमी के कारण भी वह उपेक्षित अनुभव करता रहा और उसकी पीड़ा बढ़ती रही। विभिन्न उपभोक्ता संगठनों और खुद जागरूक उपभोक्ताओं के दवाब में आखिर संसद ने १९८६ में उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम पारित किया।

उपभोक्ता मामलों पर बने कानूनों की श्रंखला में ही एक और कानून प्रतिस्पर्धा अधिनियम २००२ भी जुड़ा है। व्यापार विषयों में एकाधिकार एवं प्रतिस्पर्धा मामलों पर विचार के लिए अक्टूबर १९९९ में श्री एसवीएस राघवन की अध्यक्षता में एक समिति का गठन हुआ था, जिसने मई २००० में अपनी रिपोर्ट पेश की थी। इस समिति ने एक नई प्रतिस्पर्धा नीति की रूपरेखा तैयार की जिसमें १९६९ के एकाधिकार एवं प्रतिबन्धित व्यापार पद्धतियां कानून के स्थान पर नया

प्रतिस्पर्धा कानून बनाने तथा इसे लागू कराने के लिए एक प्रतिस्पर्धा आयोग बनाने की सिफारिश की गई थी। समिति की सिफारिश पर नया प्रतिस्पर्धा कानून बना। यह एकाधिकार एवं व्यापारिक प्रतिस्पर्धा के नियमन के लिए एक व्यापक कानून है।

प्रतिस्पर्धा कानून के उद्देश्यः

यह कानून प्रतिस्पर्धा आयोग को निम्न अधिकार प्रदान करता है –

– व्यापार प्रक्रिया में प्रतिकूल प्रभाव डालने वाली गतिविधियों पर नियंत्रण

– बाज़ार में प्रतिस्पर्धा को प्रोत्साहन देना तथा उसे नियमित रखना

– उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा करना

– बाज़ार में व्यापार–व्यवसाय करने की अन्य भारतीय प्रतिभागियों की स्वतंत्रता सुनिश्चित करना

प्रतिस्पर्धा कानून में मुख्य रूप से निम्न बातों पर ज़ोर दिया गया है।

–

– प्रतियोगिता विरोधी समझौतों पर निषेध,

– किसी क्षेत्र में एकाधिकार पर निषेध,

– संगठनों एवं संधियों पर नियमन

– प्रतिस्पर्धा की नीतियों का समर्थन

इस कानून का मुख्य उद्देश्य औद्योगिक इकाईयों के बीच प्रतिस्पर्धा को प्रोत्साहन देते हुए इसमें देसी–विदेशी व्यापारिक इकाईयों के समक्ष आने वाली बाधाओं को दूर करना है।

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम १९८६ उपभोक्ताओं के हितों को बेहतर संरक्षण देने के लिए तथा उपभोक्ता विवदों के निपटारे के लिए उपभोक्ता परिषदों के गठन और अन्य प्राधिकारी व्यवस्थाएं करने के लिए लाया गया था। वस्तुतः यह समाज कल्याण की दिशा में विधायिका द्वारा की गई इकलौती एवं उल्लेखनीय व्यापक व्यवस्था है। इसके प्रावधान विभिन्न प्रकार के शोषणकारी एवं धोखाधड़ी के मामलों में उपभोक्ताओं के हितों को काफी प्रभावशाली ढंग से संरक्षण देते हैं।

जहां दूसरे कई कानून मात्र दंडात्मक व रोकथाम की प्रवृत्ति रखते हैं, यह कानून उपभोक्ताओं को सीधे राहत उपलब्ध कराता है। आज हम इस तथ्य पर भी गर्व व संतुष्टि अनुभव कर सकते हैं कि आधुनिक एवं औद्योगिक दृष्टि से विकसित कहलाने वाले कई राष्ट्रों की तुलना में भारत का कानून उपभोक्ताओं के हितों का बेहतर संरक्षण करता है।। विगत १८ साल से लोग इसका प्रयोग कर रहे हैं। इस दौरान इसके उपयोग में कई खामियां भी सामने आईं, जिन्हें दूर करने के लिये अधिनियम में तीन बार संशोधन किए जा चुके हैं। हालांकि कानून में आगे भी संशोधन की गुंजाईश है। लेकिन इसके बावजूद यह कानून उपभोक्ताओं के हाथ में आया एक ऐसा हथियार बन गया है जिसका इस्तेमाल कर वे वस्तु एवं सेवाएं आपूर्ति कराने वालों की जवाबदेही सुनिश्चित करा सकते हैं। १९९७ में मलयेशिया में उपभोक्ता संरक्षण पर आयोजित अंतराष्ट्रीय सम्मेलन में भारत के उपभोक्ता संरक्षण कानून की भूरि भूरि प्रशंसा हुई, कहा गया कि "इस (भारत के) कानून ने उपभोक्ता अधिकारों के क्षेत्र में एक ऐसी क्रांति ला दी है जो विस्व में अन्यत्र कहीं देखने को नहीं मिलती"

उपभोक्ता संरक्षण कानून के महत्वपूर्ण पहलू –

– यह कानून , केंद्र सरकार द्वारा विशेष रूप से इसके दायरे से बाहर रखी गई वस्तुओं और सेवाओं को छोड़कर, सभी वस्तुओं एवं सेवाओं पर लागू है

– निजी, सरकारी एवं सहकारी सभी क्षेत्र इसके दायरे में आते हैं

– इस कानून की प्रवृत्ति क्षतिपूर्तिकारी है।

– यह कानून निर्णायक न्यायिक व्यवस्था देता है जो सरल, त्वरित तथा अपेक्षाकृत कम खर्चीली है।

– यह राष्ट्रीय, राज्य एवं ज़िला स्तर पर उपभोक्ता संरक्षण परिषद के गठन की व्यवस्था करता है।

– इस कानून के प्रावधान अन्य लागू कानूनों के प्रावधानों को आगे बढ़ाते हैं उन्हें खारिज़ नहीं करते।

अधिनियम में उपभोक्ताओं के अधिकार :

यह कानून उपभोक्ताओं के निम्न अधिकार प्रतिस्ठापित करता है–

– जीवन व संपत्ति के लिए खतरनाक वस्तुओं के विपणन के विरुद्ध सुरक्षा का अधिकार

– वस्तुओं की गुणवत्ता, माप, सामर्थ्य, शुद्धता, मानक और मूल्य संबन्धी सूचनाओं का अधिकार ताकि उपभोक्ता अनुचित व्यापार प्रक्रियाओं से सुरक्षित रह सके।

– प्रतियोगी मूल्य पर किसी वस्तु की अलग अलग किस्मों की यथासंभव उपलब्धता का अधिकार।

– सुनवाई का अधिकार

– अनुचित व्यापार अथवा शोषण एवं अनुचित व्यवहार की शिकायत होने पर उसके समाधान की मांग करने का अधिकार ।

– उपभोक्ता शिक्षा का अधिकार

अधिनियम में राष्ट्रीय, राज्य एवं ज़िला स्तर पर उपभोक्ता संरक्षण परिषदों के गठन की व्यवस्था है। इन परिषदों का उद्देश्य उपभोक्ता संरक्षण के लिए नीतियां बनाने तथा उनकी समीक्षा में सरकार व प्रशासन की सहायता करना है। इन परिषदों के गठन की प्रक्रिया भी काफी विस्तृत है। समाज के विभिन्न वर्गों के एवं उपभोक्ता अधिकार मामलों में रुचि एवं समझ रखने वाले संगठनों के प्रतिनिधि इनके सदस्य बनाए जाते हैं। यहां यह भी बताना ज़रूरी है कि उपभोक्ता परिषदों का गठन निजी और जन भागीदारी के ज़रिए किए जाने की व्यवस्था की गई है ताकि उपभोक्ता अधिकारों के संरक्षण के लिए बनी नीतियों की विस्तृत समीक्षा हो सके एवं उन पर समुचित प्रतिक्रिया मिल सके। इन परिषदों का मुख्य उद्देश्य समाज में उपभोक्ता हितों एवं अधिकारों का संरक्षण करना ही है।

अधिनियम में उपभोक्ता विवादों के निपटारे के लिए निर्णायक संस्थाओं की स्थापना की भी व्यवस्था है। ये संस्थाएं भी राष्ट्रीय, राज्य एवं ज़िला स्तर पर गठित होती हैं। इन्हें राष्ट्रीय उपभोक्ता आयोग, राज्य उपभोक्ता आयोग एवं ज़िला उपभोक्ता अदालत का

नाम दिया गया है। ज़िला उपभोक्ता अदालत में एक अध्यक्ष एवं दो अन्य सदस्य होते हैं जिनमें से एक महिला होती है। ज़िला उपभोक्ता अदालत के लिए सदस्यों की नियुक्ति पांच साल के लिए होती है। सदस्य की उम्र ६५ वर्ष से कम ही होनी चाहिए। उम्र ६५ वर्ष से कम होने पर किसी सदस्य की पुनः नियुक्ति भी की जा सकती है। अब किसी भी सदस्य के लिए न्यूनतम शैक्षणिक योग्यता भी स्नातक कर दी गई है। राज्य उपभोक्ता आयोग के अध्यक्ष पद पर उच्च न्यायालय के अवकाशप्राप्त न्यायधीश की नियुक्ति होती है जबकि राष्ट्रीय उपभोक्ता आयोग के अध्यक्ष के पद पर उच्चतम न्यायालय के अवकाशप्राप्त न्यायधीश की नियुक्ति की जाती है। ज़िला उपभोक्ता अदालतों में २० लाख तक के विवादों पर सुनवाई होती है। उससे ऊपर एक करोड़ तक के विवादों की सुनवाई राज्य आयोग तथा एक करोड़ से ऊपर के मामलों की सुनवाई राष्ट्रीय आयोग के सामने होती है। इन संस्थाओं में न्यायिक कार्यवाही न्याय के प्राकृतिक सिद्धांत के आधार पर होती है। इस समय देश में राष्ट्रीय आयोग के साथ ३५ राज्य आयोग तथा ५७१ ज़िला अदालतें चल रहीं हैं। राष्ट्रीय आयोग तथा कुछ राज्य आयोगों ने अपनी खंडपीठों की स्थापना भी की है

हालांकि इस तस्वीर का एक अन्य पहलू भी है। देश भर में ज़िला उपभोक्ता अदालतों में अध्यक्ष और सदस्यों के २५३ पद खाली पड़े हैं साथ ही ७३ ज़िला अदालतें इस समय काम नहीं कर रहीं हैं। अब शिकायत के साथ निर्धारित फीस भी देनी पड़ती है। यह फीस उपभोक्ता मामलों एवं खाद्य व सार्वजनिक वितरण प्रणाली मंत्रालय ने उपभोक्ता संरक्षण (संशोधन) नियम २००४ की धारा ६ क के तहत निर्धारित की है। यह फीस निम्नानुसार है –

क्रम संख्या	वस्तु अथवा सेवा का मूल्य तथा क्षतिपूर्ति के लिए दावे की राशि	देय फीस रुपए में
१	एक लाख रुपए तक्	१००
२	एक लाख से पांच लाख रुपए के बीच	२००
३	पांच लाख से १० लाख रु। के बीच	४००
४	१० लाख रुपए से ऊपर लेकिन	

२० लाख से कम ५००

३० सितंबर २००४ तक राष्ट्रीय एवं राज्य आयोगों के पास आई शिकायतों एवं ३० जून २००४ तक ज़िला उपभोक्ता अदालतों के पास आई शिकायतों का विवरण –

क्रम संख्या	संस्था	कुल शिकायतें	निपटाईं गई शिकायतें	प्रतिशत
१	राष्ट्रीय आयोग	३५५३५	२७७२६	७८।०३
२	राज्य आयोग	३५५०१२	२३७८०८	६६।६६
३	ज़िला उपभोक्ता अदालतें	१६४४७६८१७०६६०३		८७।६१

राष्ट्रीय आयोग, राज्य आयोग तथा ज़िला अदालतों में दर्ज़ शिकायत का यथासंभव निपटारा दूसरे पक्ष को नोटिस मिलने के तीन महीने के भीतर कर लेना होता है। लेकिन जिन मामलों में वस्तुओं की जांच अथवा समीक्षा की जानी हो उनमें यह अवधि पांच महीने रखी गई है। ज़िला अदालत के फैसले के खिलाफ राज्य आयोग में और राज्य आयोग के फैसले के खिलाफ राष्ट्रीय आयोग में फैसले के ६० दिन के अन्दर अपील की जा सकती है। राष्ट्रीय आयोग के फैसले के खिलाफ भी अपील उच्चतम न्यायालय में ६० दिन के अन्दर की जा सकती है। लेकिन राष्ट्रीय आयोग द्वारा निर्णय में किसी पक्ष पर जुर्माना लागाए जाने की स्थिति में उस पक्ष को जुर्माने की आधी राशि अथवा पचास हज़ार रुपए, जो भी कम हो, निर्धारित तरीके से जमा कराने पड़ते हैं तभी उच्चतम न्यायालय में उसकी अपील स्वीकार हो सकती है। इसी तरह राष्ट्रीय आयोग में अपील के लिए ३५ हज़ार और राज्य आयोग में अपील के लिए २५ हज़ार रुपए ज़मा कराने की व्यवस्था है।

केंद्र सरकार को मिल रहीं अनेक रिपोर्ट्स और प्रतिक्रियाओं के मुताबिक राज्यों में कई अदालतों को उचित स्थान और सुविधाएं और

कर्मचारी भी नहीं मिल रहे हैं। कई अदालतों में सदस्यों और अध्यक्षों के पद खाली पड़े हैं जिनका असर मामलों के निपटारे पर पड़ रहा है। यह समझ लेना ज़रूरी है कि एक उपभोक्ता का विश्वास इन अदालतों और आयोगों के सफलतापूर्वक काम करने पर ही निर्भर करता है। इसीलिए महत्वपूर्ण है कि ये संस्थाएं पूरे प्रभाव, क्षमता के साथ बिना किसी रोक टोक के काम कर सकें। इस काम को अंजाम देने के लिए में राज्य सरकारों की सटीक भूमिका निभाने की आवश्यकता है।

उपभोक्ता कानून के कुछ अन्य पहलू –

शिकायतकर्ता कौन है :

शिकायतकर्ता से तात्पर्य है –

- उपभोक्ता
- कोई स्वयसेवी उपभोक्ता संस्था
- राज्य सरकार अथवा केंद्र शासित प्रशासन
- एक से अधिक उपभोक्ता का समूह, जहां सबके हित एकरूप हों

शिकायत क्या होती है :

शिकायत का अर्थ किसी शिकायतकर्ता द्वारा लिखित रूप में लगाए गए आरोप से होता है जिसमें बताया गया हो कि –

- किसी व्यापारी द्वारा व्यापार के में अवैध अथवा प्रतिबन्धित तरीके का इस्तेमाल किया जा रहा है
- खरीदी गई अथवा खरीदने के लिए सहमति बनने पर किसी वस्तु में एक या अधिक दोष सामने आना
- ली जा रही अथवा जिनके लेने पर सहमति हो चुकी हो, ऐसी सेवाओं में किसी प्रकार की कमी
- व्यापारी ने शिकायत में बताई गई किसी वस्तु अथवा सेवा के लिए तय मूल्य अथवा दर से अधिक मूल्य वसूल लिया हो। जबकि –
  - तय दर/मूल्य उस समय लागू किसी कानून द्वारा
  - तय दर उस वस्तु पर अंकित हो

– तय दर उस वस्तू के रखने के लिए इस्तेमाल होने वाले डब्बे पर अंकित हो

– जीवन के लिए खतरनाक वस्तुओं अथवा सेवाओं के मामले में जहां उनसे आम जन के जीवन को किसी तरह खतरा उत्पन्न हो रहा हो

वस्तुओं, सेवाओं और खामियों को कानून में स्पस्ट रूप से परिभाषित किया गया है।

शिकायत कौन कर सकता है –

शिकायत निम्न में से किसी के द्वारा दायर की जा सकती है –

– वह उपभोक्ता जिसे कोई वस्तु बेची गई हो, प्रदान की गई हो अथवा बेचने/प्रदान करने पर सहमति बनी हो। या उसने कोई सेवा ली हो अथवा उस पर सहमति बनी हो।

– स्वयंसेवी उपभोक्ता संस्थाएं

– केंद्र सरकार

– राज्य सरकारें अथवा केंद्र शासित प्रशासन

– एक से अधिक उपभोक्ता, जहां विभिन्न उप्भोक्ताओं के हित एकरूप ही हों।

वैसे तो उपभोक्ता की परिभाषा काफी व्यापक है लेकिन ऐसा उपभोक्ता जिसने कोई वस्तु खरीदी हो, उसे प्रदान की गई हो , खरीदने अथवा प्रदान करने की सहमति बनी हो, या उसने कोई सेवा ली हो अथवा उसे दी जानी हो, शिकायत दर्ज़ कर सकता है। कानून में धारा २(१) ख में शिकायतकर्ता की परिभाषा शिकायत कर सकने वाले वादियों की अलग से दी गई सूची से भिन्न है। २००२ में हुए संशोधन कर शिकायतकर्ता की परिभाषा में मृत व्यक्तियों के कानूनी उत्तराधिकारियों अथवा प्रतिनिधियों को भी शामिल कर लिया गया है लेकिन धारा १२(१) में शिकायत कर सकने वाले शिकायतकर्ताओं की अलग से दी गई सूची को संशोधित नहीं किया गया है जिसके चलते भ्रम पैदा हो गया है कि किसी उपभोक्ता की मृत्यू की स्थिति में उसके

उत्तराधिकारी अथवा प्रतिनिधि को शिकायत करने का अधिकार है अथवा सिर्फ शिकायतकर्ता की मृत्यू होने की स्थिति में ही कोई उत्तराधिकारी माना जायेगा।

शिकायत में निम्नलिखित जानकारी दी जानी चाहिए-
१. शिकायतकर्ता का नाम परिचय और पता
२. जिसके खिलाफ शिकायत की जा रही है उसका पूरा नाम, पता और परिचय ३। शिकायत के बारे में संपूर्ण तथ्य उसका समय
४. आरोपों के समर्थन में आवश्यक दस्तावेज़, यदि कोई हों तो।
५. शिकायतकर्ता अपनी शिकायत के निवारण के रूप में किस तरह की राहत चाहता है ।
शिकायत पर शिकायतकर्ता अथवा उसके अधिकृत व्यक्ति के हस्ताक्षर होने चाहिएं

कानून में उपभोक्ताओं को राहत प्रावधान -
उपभोक्ता संरक्षण कानून में उपभोक्ताओं को निम्नलिखित राहत का प्रावधान है -
- वस्तुओं में खामियों को दूर करा देना
- खराब वस्तू के बदले नई वस्तु दिलवाना
- खराब वस्तु के ऐवज़ में उसकी अदा की कीमत वापस दिलवाना
- वस्तु खराब होने के कारण हुए नुकसान का मुआवज़ा
- अवैध अथवा प्रतिबन्धित व्यापार प्रक्रिया को रोकना
- खतरनाक वस्तुओं की बिक्री के लिए न रखना
- खतरनाक वस्तुओं की बिक्री रद्द कराना
- खतरनाक वस्तुओं के निर्माण पर प्रतिबन्ध लगाना और खतरनाक किस्म की सेवाओं पर रोक लगाना
- यदि किसी उत्पाद अथवा सेवा में अधिक उपभोक्ताओं को नुकसान पहुंचा है जिनकी पहचान सुविधाजनक न हो तो ऐसी स्थिति में फोरम एकमुश्त राशि अदा करने का आदेश दे सकती है यह राशि फोरम द्वारा ही निर्धारित की जायेगी लेकिन कुल मूल्य के ५ प्रतिशत से कम

नहीं होगी।

– भ्रामक विज्ञापन से हुए नुकसान की भरपाई के लिए ने सिरे से संशोधित विज्ञापन देना

– पीड़ित पक्ष को समुचित राशि दिलवाने की व्यवस्था करना

उपभोक्ता अधिकार (संशोधित) अधिनियम २००२ की मुख्य बातें

यह संशोधित अधिनियम १५ मार्च २००३ को अधिसूचित हुआ था । इसके प्रमुख बिन्दू हैं –

– "किसी उपभोक्ता की मृत्यू की स्थिति में उसका कानूनी उत्तराधिकारी अथवा प्रतिनिधि" ये शब्द मूल कानून की धारा २ के उपबन्ध १ में जोड़े गए हैं।

– यदि कोई व्यक्ति व्यावसायिक उद्देश्य के लिए कोई सेवा लेता है तो उसे उपभोक्ता की श्रेणी से निकाल दिया गया है। हालांकि "व्यावसायिक उद्देश्य" में किसी व्यक्ति द्वारा स्वरोज़गार के लिए अपनी जीविकोपार्जन के उपयोग में ली गई किसी वस्तु अथवा सेवा का उपयोग शामिल नहीं है।

– "नकली सामान अथवा सेवाएं" ये शब्द मूल कानून की धारा २ के उपबन्ध ० के बाद उपबन्ध ०० के रूप में जोड़े गए हैं।

– उपभोक्ता हितों को ज़िले में ही संरक्षा और प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से मूल कानून में ज़िलाधिकारी की अध्यक्षता में " ज़िला उपभोक्ता अधिकार संरक्षण परिषद का गठन" में नई धाराएं ८क व ८ ख जोड़ी गईं हैं

– परिषद के सदस्यों की योग्यताएं और अयोग्यताएं निर्धारित की गई हैं

– किसी सदस्य के ६५ साल उम्र पूरा करने तक उसे पुनः सदस्य नियुक्त किए जाने की व्यवस्था की गई है।

– धारा १२ में शिकायत दर्ज़ करने की विधि के बारे में नई धारा सम्मिलित की गई है।

– सुनवाई स्थगन के मामले सम्बन्धी प्रावधान में। धारा १३ में नया उपबन्ध ३क जोड़कर प्रावधान किया गया है कि " सामान्यतः कोई

स्थगन नहीं दिया जाएगा" – अंतरिम आदेश देने के अधिकार के बारे में धारा १३ में ३ ख उपबन्ध जोड़ा गया है।

– दन्डनीय नुकसान के मामले में अधिकार में धारा १४ की उपधारा १ में बन्ध घ जोड़ा गया है।

– भ्रामक विज्ञापनों से हुए नुकसान की भरपाई के लिए विज्ञापनदाता के खर्चे पर नए संशोधित विज्ञापन के आदेश का अधिकार देने के लिए धारा १४ की उपधारा १ में नया बन्ध जोड़ा गया है।

– राज्य आयोग के अध्यक्ष को अधिकार है कि वह राज्य में अपनी एक या अधिक सदस्यों के साथ अपनी खंडपीठ की स्थापना करे ।

– नई धारा १७ क जोड़कर राज्य आयोग को अधिकार दिया गया है कि वह न्याय की रक्षा के लिए किसी आवेदन पर अथवा स्वतः संज्ञान लेते हुए किसी मामले को राज्य के भीतर ही एक ज़िला अदालत से दूसरे ज़िला अदालत में स्थांतरित कर सकता है।

– राष्ट्रीय आयोग की खंडपीठ की स्थापना

– राष्ट्रीय आयोग को अपने ही आदेश में त्रुटि उजागर होने पर उसकी समीक्षा का अधिकार है।

– राष्ट्रीय आयोग, राज्य आयोग और ज़िला अदालत के आदेशों को पालन के लिए प्रावधान

– उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के दायरे में आने वाले सभी अपराधों पर, १९७३ के अपराध कानून में सम्मिलित होने के बावजूद भी, मुकदमा चलाया जा सकता है। अपराध मुकदमों की सुनवाई में ज़िला अदालत, राज्य आयोग, और राष्ट्रीय आयोग को प्रथम श्रेणी मजिस्ट्रेट के अधिकार प्राप्त होंगे।

– सेवाओं के उल्लेख के लिए नई धारा २८ क जोडी गई है।

उपभोक्ता संरक्षण : बेहतर प्रशासन के अभीष्ट

उपभोक्ता संरक्षण कानून का प्रभावी, सक्षम और ईमानदारी से लागू होना ऐसे सुशासन की नींव रखता है जिससे आगे उपभोक्ताओं के हितों के बेहतर संरक्षण को प्रोत्साहन मिलेगा। अगर वस्तुओं की गुणवत्ता और सेवाओं के मामले में उपभोक्ताओं के हितों का ध्यान

रखा जायेगा तो आगे शिकायत की गुंजाईश ही नहीं रहेगी। इससे निश्चय ही ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न होंगी जिनमें ग्राहक और उपभोक्ता अपने लिए ज़रूरी वस्तुओं के खरीद फरोख्त में काफी संतुष्ट महसूस करेंगे। इस संदर्भ में सुशासन से संबन्धित मुद्दों को उपभोक्ता संरक्षण से जुड़े मुद्दों से जोड़कर गहन विमर्श ज़रूरी है। सामान्यतः सुशासन में जिन बातों पर ज़ोर डाला जाता है वे हैं – कार्यकुशलता, प्रभावशीलता, सिद्धंत, समानता, अर्थ– व्यवस्था, पारदर्शिता, जवाबदेही, सशक्तीकरण, तर्कसंगतता, ईमानदारी, और सहभागिता। सुशासन की इन बातों को बड़ी ही आसानी से उपभोक्ता संरक्षण से जोड़कर देखा जा सकता है। इस दृष्टि से कहा जा सकता है कि उपभोक्ता संरक्षण के लिए जिन बातों पर ज़ोर दिया जाना चाहिए वे हैं – व्यापारिक गतिविधियों में ईमानदारी सुनिश्चित करना, बेहतर गुणवत्ता वाले सामान और दोषमुक्त सेवाएं प्रदान कराना, साथ ही उपभोक्ता की पसन्द को ध्यान में रखते हुए गुणवत्ता, मात्रा, क्षमता, बनावट, और कीमत के संबन्ध पूर्ण सूचना उपलब्ध कराना। उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के तहत उपभोक्ताओं को उपलब्ध समाधानों को देखकर कहा जा सकता है कि यदि इन्हें पूरी ईमानदारी ओर समर्पण से लागू किया जा सके तो कहना गलत नहीं होगा कि एक दिन सुशासन की धारणा बड़े पैमाने पर साकार हो सकेगी और उपभोक्ता इस हद तक संतुष्ट होंगे कि शिकायत की कोई वजह ही नहीं बचेगी। इस तरह उपभोक्ताओं के हितों की सुरक्षा करने वाले कानूनों को सक्षमता से लागू कर सुशासन के लक्ष्य को हासिल किया जा सकता है।

आखिर में उपभोक्ता हितों की रक्षा से और सुशासन के इस अंतरसंबन्ध को इससे संबन्धित घटनाओं के उदाहरण से और स्पष्ट किया जा सकता है। जैसा कि पहले भी कहा जा चुका है कि सुशासन अभियान का एक अहम अंग जनता के बीच अपने उत्पाद और सेवाएं पेश करने वाले उत्पादकों और व्यापारियों की जवाबदेही तय करना भी है। लखनऊ विकास प्राधिकरण बनाम एम के गुप्ता मामले

में माननीय उच्चतम न्यायालय के आदेश को इसके उदाहरण के रूप में देखा जा सकता है। इस मामले में उच्चतम न्यायालय ने उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के तहत गठित संस्थाओं के अधिकारों और दायरे को स्पष्ट करते हुए बल देकर कहा कि किसी निजी संस्था, वैधानिक अथवा सार्वजनिक संस्था द्वारा दी जाने वाली सेवाएं भी उपभोक्ता संरक्षण कानून के दायरे में आती हैं। इस मामले में अदालत ने यह भी साफ किया कि ऐसी सेवाओं में कोई दोष या त्रुटि अनुचित व्यापार प्रक्रिया मानी जायेगी और इसे सेवा न देने का मामला माना जा सकता है।

इस मामले में उच्चतम न्यायालय की टिप्पणी को जनता के प्रति जवाबदेही के संदर्भ में देखना अधिक उपयोगी होगा। उच्चतम न्यायालय की टिप्पणी को देखें – " सार्वजनिक प्राधिकरणों में मनमानी और निरंकुश कार्यवाहियों के प्रति जवाबदेही का प्रशासनिक व्यवस्था काफी प्रगति कर चुकी है। अब यह स्वीकार किया जा चुका है कि राज्य को अपने कर्माचारियों की मनमानी के कारण किसी नागरिक को हुए नुकसान की भरपाई करनी ही होगी। संवैधानिक अधिकारों का इस्तेमाल करते हुए कोई सार्वजनिक प्राधिकारी छूट का दावा नहीं कर सकता। जो भी प्राधिकारी अपने संवैधानिक अथवा विधाई प्रावधानों का उल्लंघन कर दमनात्मक कार्रवाई करेंगे वे अपने व्यवहार के लिए स्वयं जवाबदेह होंगे। (उपभोक्ता संरक्षण) कानून में प्रत्येक अधिकारी को, सामान या सेवा अथवा मुआवज़े के मामले में, उपभोक्ता की शिकायत पर विचार करने का अधिकार प्राप्त है। कानून के मुताबिक आयोग अथवा ज़िला अदालत न सिर्फ वस्तु या सेवा की कीमत के बदले दण्ड लगा सकती है बल्कि उसे उपभोक्ता के साथ हुए अन्याय की को देखते हुए मुआवज़ा दिलाने का भी अधिकार है"

इसी क्रम में यह भी टिप्पणी की गई कि आज केवल उपभोक्ता की क्षतिपूर्ति का दण्ड ही मुद्दा नहीं है। सामाजिक आर्थिक परिदृश्य में सार्वजनिक कार्यकर्ताओं (सरकारी कर्मचारियों) की अवधारणा में समय के साथ साथ काफी बदलाव आये हैं। आधुनिक युग में कोई भी

अधिकारी कानून में अपने अधिकारों को लेकर मनमाने दावे नहीं कर सकता। अब यह अधिकार के प्रयोग में ही अंतर्निहित और अनिवार्य है कि इसका प्रयोग सिर्फ समाज के लिए होना चाहिए। "इसलिए आवश्यक है कि यदि आयोग यह मानता है कि कोई शिकायतकर्ता उत्पीड़न, मानसिक पीड़ा अथवा अत्याचार के एवज़ में क्षतिपूर्ति का अधिकारी है तो वह संबन्धित विभाग को जनता के कोष में से तुरंत मुआवज़ा देने का आदेश दे सकता है लेकिन तत्पश्चात उस विभाग को इस अक्षम्य व्यवहार के लिए ज़िम्मेदार कर्मचारियों से यह राशि वसूलनी होगी।" उपभोक्ता संरक्षण कानून के तहत उपभोक्ता के अधिकारों की रक्षा करते हुए उच्चतम न्यायलय ने यहां सरकारी कर्मचारियों की जवाबदेही के नियम की जो व्यवस्था दी है वह जनता के प्रति सरकार की जवाबदेही तय करने की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान देती है क्योंकि यह सुशासन अभियान का एक प्रमुख विचार बिन्दु है। जनता के प्रति जवाबदेही के नियम के महत्व और उपभोक्ता संरक्षण कानून में स्थापित निकायों की भूमिका के बारे में यह निर्णय अति महत्वपूर्ण हो जाता है। उपभोक्ता अधिकारो के संरक्षण और प्रोत्साहन के क्षेत्र में भूमिका निभाने जा रहे और प्रशासनिक सुधार एवं सुशासन के लिए काम करने जा रहे व्यक्तियों को उपरोक्त निर्णय के बारे में पढ़ना अनिवार्य कर देना चाहिए।

इसी प्रकार अस्पतालों और चिकित्सकीय सेवाओं के रवैये में सुधार सुनिश्चित करने के लिए उच्चतम न्यायालय ने *इंडियन मेडीकल एसोसिएशन* बनाम *वी पी सहान्ता व अन्य* के मुकदमे में महत्वपूर्ण निर्णय दिया था जिसे पेशेवर लोगों की अपने उपभोक्ताओं के प्रति जवाबदेही की व्याख्या के रूप में देखा जा सकता है। इसी तरह *चरण सिंह* बनाम *हीलिंग टच हास्पिटल* मुकदमे में उच्चतम न्यायलय ने टिप्पणी दी कि "एक प्रमाणित मामले में नुकसान का निर्धारण करते समय उपभोक्ता अदालतों को न्याय को अंतिम सिरे तक पहुंचाने की कोशिश करनी चाहिए ताकि क्षतिपूर्ति की जा सके, इससे न केवल नुकसान उठाने वाले व्यक्ति को राहत मिलेगी बल्कि साथ ही गुणवत्ता को लेकर सेवा प्रदाता के रुख में भी बदलाव आएगा।" यहां यह भी

उल्लेखनीय है कि उपभोक्ता अदालतों और आयोगों के समक्ष आने वाले मामलों में, वस्तुओं की गुणवत्ता में कमी की शिकायतों के मुकाबले सार्वजनिक सेवाओं में खामियों की शिकायतें कहीं अधिक होतीं हैं। बदलते आर्थिक परिवेश में सेवाओं में दोष की शिकायतें बढ़ने की पूरी आशंका है। इसीलिए उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के तहत गठित उपभोक्ता अदालतों एवं आयोगों के कामकाज को कुशल, प्रभावी, ईमानदार और कम खर्चीला बानने पर अधिक ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है।

उपभोक्ता संरक्षण अभियान : भविष्य की दिशा

उपभोक्ता संरक्षण अभियान को प्रभावी और सार्थक बनने के लिए सरकार, व्यापारिक संस्थानों, सामाजिक संगठनों, स्कूल – कालेज आदि शैक्षणिक संस्थाओं और अनुसंधान संस्थानों के सक्रिय सहयोग की आवश्यकता है। कुल मिलाकर इस आंदोलन को सफल और सार्थक बनाने के लिए जनता के हर आदमी की आवश्यकता है। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि भारत सरकार द्वारा उपभोक्ता मामलों के मंत्रालय के माध्यम से चलाए जा रहे कार्यक्रम योजनाएं और नीतियां काफी कमहत्वपूर्ण भूमिका निभा रहीं हैं लेकिन यह भी सत्य है कि इनकी सफलता और प्रभाव बड़े पैमाने पर आमजन की सहभागिता पर ही निर्भर करती है। केंद्र सरकार इस दिशा में भी कई योजनाएं चला रही है यथा – ग्राहक जागरण, उपभोक्ता क्लब, अनुसंधान संस्थानों, विश्वविद्यालयों, कालेज आदि में उपभोक्ता संरक्षण और कल्याण प्रोत्साहन योजनाएं आदि आदि। देश में उपभोक्ता आंदोलन को आगे ले जाने के लिए इसी तरह की बहुत सी योजनाएं राज्यों के स्तर पर भी चलाए जाने की आवश्यकता है। सामाजिक संगठन और शैक्षणिक संस्थाएं इस मामले में अहम ज़िम्मेदारी निभा सकतीं हैं।

उपभोक्ता कानून के दायरे को आगे ले जाते हुए राष्ट्रीय आयोग ने एक महत्वपूर्ण निर्णय से नए द्वार खोल दिए हैं जिसका ज़िक्र यहां करना ज़रूरी है। आयोग ने भूपेश खुराना व अन्य बनाम विश्व बुद्ध परिषद व अन्य मामले में निर्नय् दिया कि शिक्षा प्रदान करने का

काम भी उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के मुताबिक सेवा के दायरे में आता है। आयोग ने निर्णय दिया था कि शिक्षण संस्थानों को शिक्षा की सेवा प्रदान करने के लिए फीस दी जाती है। कुकुरमुत्तों की तरह गली गली में उग रहे स्कूल कालेजों को देखते हुए आयोग का यह निर्णय काफी अहमियत रखता है, क्योंकि ये संस्थान भारत और विदेश के नामी गिरामी विश्वविद्यालयों या संस्थानों से मान्यता का झूंठा दावा कर इतनी फीस वसूलते हैं जो आम आदमी की पहुंच से बाहर होती है। इनमें से ज्यादातर संस्थान किसी विषय की पढ़ाई के लिए अयोग्य शिक्षकों की भर्ती कर लेते हैं और कई बार तो वह भी उपलब्ध नहीं होता है। समय पर परीक्षा न होना, रिज़ल्ट न आना और डिग्री या प्रमाण पत्र न मिलना जैसी शिकायतें इस संस्थानों के बारे में अक्सर मिलतीं रहतीं हैं। ऐसे ज्यादातर संस्थानों के संचालक सिर्फ व्यावसायिक हित के लिए इन्हें शुरू करते हैं और मौका लगते ही उड़न छू हो जाते हैं। पिछले दशकों में शिक्षा देने का काम समाज की सेवा की जगह सिर्फ पैसा कमाने का व्यवसाय बन गया है। इसमें सवाल सिर्फ आर्थिक नुकसान और धोखाधड़ी का ही नहीं है बल्कि छात्रों के भविष्य भी दाव पर लगा है।

इस तरह के कई मामले राष्ट्रीय उपभोक्ता आयोग के सामने आ चुके हैं। इनमें उपभोक्ता मामलों की इस सर्वोच्च अदालत ने स्पष्ट रूप से कहा है कि शिक्षा प्रदान करना सेवा प्रदान करना ही है। आयोग ने इस तरह के कई मामलों में पीड़ित उपभोक्ताओं को मुआवज़ा दिलवाया है। इनमें छात्रों को समय पर रोल नम्बर न मिलने, प्रवेश प्रार्थना पत्र पर विचार करने में बिना कारण बताए विलम्ब करने, विज्ञापनों एवं परिचय पुस्तिकाओं में संस्थान की मान्यता के बारे में असत्य दावे प्रकाशित करने, प्राथमिक फीस न लौटाने जैसे मामले सामने शामिल रहे हैं जिन्हें सेवा में खामी माना गया।

उपभोक्ता संरक्षण आंदोलन में शैक्षणिक सम्स्थानों की भूमिका को किसी आधार पर खारिज़ नहीं किया जा सकता है। इन संस्थानों से इस अभियान में एक सकारात्मक एवं महत्वपूर्ण भूमिका की अपेक्षा है। विशेषतः उपभोक्ता शिक्षा के क्षेत्र में जहां अलग अलग तरीकों से

उपभोक्ता को उसके अधिकारों और हितों की शिक्षा दी जा सकती है। कहा जाता है कि एक जागरूक उपभोक्ता किसी भी समाज का बहुमूल्य संपत्ति होती है। शिक्षण संस्थाएं सेमिनार, कार्यशालाएं, परिचर्चाए, व्याख्यान, निबन्ध प्रतियोगिताएं, वाद विवाद, क़्विज़ आदि माध्यम अपनाकर उपभोक्ताओं को शिक्षित कर इस दिशा में योगदान दे सकतीं हैं।

सारांश :

हम सभी के लिए एक कुशल और प्रभावी उपभोक्ता संरक्षण कार्यक्रम महत्व रखता है क्योंकि हम सब ही उपभोक्ता हैं। यहां तक कि किसी वस्तु का निर्माता अथवा कोई सेवा प्रदाता भी किसी अन्य वस्तु या सेवा का उपभोक्ता है। यदि निर्माता/सेवा प्रदाता तथा उपभोक्ता इस परस्पर निर्भरता को समझ लें तो मिलावटी, नकली या दोषपूर्ण सामान या ऐसी दूसरी खामियां बीते ज़माने की बात रह जाएंगी। समाज के हर हिस्से से वो चाहें केंद्र – राज्य सरकारें हों, शिक्षण संस्थाएं, ग़ैर सरकारी संगठन, समाचार पत्र, टैलीविज़न हों सभी से इसके लिए सक्रिय भूमिका की अपेक्षा है। उद्योग जगत में व्यापारियों और निर्माताओं के लिए स्वैच्छिक आचार संहिता बनाकर तथा सेवा प्रदाताओं द्वारा नागरिक अधिकार पत्र बनाकर उनका पालन करना आवश्यक है ताकि उपभोक्ताओं को उनका हक मिल सके। आज की सबसे बड़ी आवश्यकता है सामाजिक ज़िम्मेदारी को समझते हुए उपभोक्ताओं के प्रति पूर्ण समर्पण। यह कार्य सद्भावना के साथ होना चाहिए तभी हमारा समाज रहने के लिए एक बेहतर जगह बन सकेगा।